नटो तो कहो मत

(प्रथम भाग)

लेखक—

डा० कन्हैयालाल सहल

अध्यक्ष, हिन्दी-संस्कृत-विभाग,

बिड़ला आर्ट्स कालेज,

पिलानी (राजस्थान)

निवेदन

पाश्चात्य विद्वानों ने लोक-कथाओं के मूल भावों (Moti
वैज्ञानिक अध्ययन किया है। प्रस्तुत पुस्तिका में राजस्थानी लो
ओं के कुछ प्रेरक अभिप्रायों का विवेचन हुआ है। Mot
के लिए मूल भाव तथा प्रेरक अभिप्राय दोनों शब्द व्यव
हैं। कुछ विद्वानों ने इस शब्द के पर्याय के रूप में 'कथानक
' का प्रयोग किया है। इन मूल भावों के निदर्शनार्थ मैंने
स्थानी लोक-कथाओं के उदाहरण दिये हैं, उनमें से बहुत
-कथाएँ श्रीरावतजी सारस्वत के सौजन्य से प्राप्त हुई हैं जिन
लेखक उनका अत्यन्त आभारी है। राजस्थानी लोक-कथा
क मूल भाव 'नटो लो कहो मत' को लेकर ही पुस्तक
करण-संस्कार किया गया है। श्री सारस्वतजी ने पुस्तक
शन में जिस त्वरा और तत्परता का परिचय दिया है,
य है। पुस्तक का दूसरा भाग भी प्रेस में दे दिया गया है
ही प्रकाश में आयेगा।

पिलानी

विषय--सूची

मूल-भाव (*Motifs*)

१. असम्भव

राजस्थानी भाषा की एक प्रसिद्ध लोक-गाथा है:—

करता रै सग कीजिये, सुण रै राजा-भील ।
सोनै रै घुण लागगो तो छोरै नै लेगी चील ।।

उक्त लोक-गाथा के पीछे निम्नलिखित कथा कही जाती है:—

एक बनिया था जो जीविकोपार्जन के लिए परदेश गया। जाते
प वह अपना कुछ सोना एक मित्र के यहाँ रख गया। परदेश से
ने पर जब वह अपना सोना वापिस लेने के लिए अपने मित्र के यह
तो मित्र ने उत्तर दिया—"तुम्हारे सोने के तो घुन लग गया।'
सुन कर बनिया कहने लगा—"भाई, ठीक है, यह मेरे भाग्य क
है; जब मेरे सोने के घुन ही लग गया तो तुम अब कर भी क्य
ते हो ?" यह सुन कर मित्र बड़ा प्रसन्न हुआ और वह बनिये के प्रति
आदर-सत्कार दिखलाने लगा और उसे भोजन के लिए निमंत्रित भी
किया। बनिये ने जब भोजन के पहले स्नान करने की इच्छा प्रकट
तो उसके मित्र ने अपने छोटे लड़के को बनिये के साथ कर दिय
क वह उसे पास के तालाब में स्नान करा लावे। बनिये ने जब स्नान
लिया तो उसने अपने मित्र के लड़के को किसी स्थान पर छिपा
।। लौटने पर मित्र ने अपने लड़के के सम्बन्ध में जब पूछताछ की
चतुर बनिये ने उत्तर दिया—"क्या कहूँ, जब मैं नहा रहा था, तुम्हा

ये न भी सब किस्सा कह सुनाया और उक्त गाथा कही जिस
पय यह है कि हे भील राज ! शठ के प्रति शठता का ही व्यवह
ना चाहिए। यदि सोने के घुन लग गया तो बच्चे को भी चील उ
गई !!

उक्त लोक-गाथा का मूल आधार हमे जातक और पंचतन्त्र
लब्ध होता है। 'कूटवाणिज' जातक में बतलाया गया है कि एक ग्रा
सी तथा एक नगर-वासी दो बनियों की आपस में मित्रता थी। ग्रा
सी ने नगर-वासी के पास पाँच सौ फाल रक्खे। उसने उन फालों
, कीमत ले, जिस जगह पर फाल रक्खे थे, वहाँ चूहो की मेंगनें फै
। समय बीतने पर ग्रामवासी ने आकर कहा—मेरे फाल दे। कुटि
नए ने चूहे की मेंगनें दिखा कर कहा कि तेरे फालों को चूहे खा गए

दूसरे ने 'अच्छा खाये गये सो खाये गये, चूहों के खा लेने पर क
या जा सकता है ?' यह कह कर नहाने के लिए जाते समय उसके पु
साथ ले जा, एक मित्र के घर मे बिठला कर कहा—इसे कहीं
ने दें। फिर स्वयं नहा कर कुटिल बनिये के घर गया। उसने पूछा—
रा पुत्र कहाँ है ?' "मै तेरे पुत्र को किनारे बैठा कर पानी में डुब
ा रहा था। एक चिड़िया आई और तेरे पुत्र को पंजो मे ले आका
उड़ गई। मैने हाथ पीटे, चिल्लाया, कोशिश की, लेकिन तब भी उ
छुड़ा सका।" "तू झूठ बोलता है। चिड़िया बच्चो को लेकर नहीं
ती।" "मित्र, असम्भव होने पर भी, मै क्या करूँ ? तेरे पुत्र
ड़िया ही ले गई है।"

उसने डराते हुए कहा—अरे मनुष्यघातक, दुष्ट, चोर ! अ
ालत में जाकर निकलवाता हूँ। यह कह कर वह चला। 'जो तु

ा अब मेरा पुत्र कहाँ है ? पूछने पर कहता है कि उसे चिड़िया ले
ी। इस मुकद्दमे का फैसला करें।

बोधिसत्त्व ने दूसरे से पूछा—"क्या यह सच है ?" "स्वामी ! मैं
े लेकर गया। चिड़िया के उसे ले जाने की बात सच ही है।"

"क्या इस दुनिया में चिड़ियाँ बच्चों को ले जाती हैं ?"

"स्वामी ! मैं भी आपसे पूछना चाहता हूँ कि चिड़ियाँ तो बच्चों
ा लेकर आकाश में नहीं उड़ सकतीं, तो क्या चूहे लोहे के फाल खा
कते हैं ?"

"इसका क्या मतलब है ?"

"स्वामी ! मैंने इसके घर में पाँच सौ फाल रक्खे। यह कहता है
क तेरे फालों को चूहे खा गये और 'यह तेरे फालों को खाने वाले चूहों
ी मेंगनी हैं' कहकर मेंगनी दिखाता है। स्वामी ! यदि चूहे फालें
ाते हैं, तो चिड़ियाँ भी बच्चे ले जाती है। यदि नहीं खाते हैं तो
चड़ियाँ तो क्या, बाज भी बच्चे नहीं ले जा सकते। यह कहता है कि
रे फालों को चूहे खा गए। उन्होंने खाए या नहीं खाए, इसकी
रीक्षा करें। मेरे मुकद्दमे का फैसला करे।"

बोधिसत्त्व ने सोचा—इसने शठ के प्रति शठता का व्यवहार करके
ीतने की बात सोची होगी। उससे कहा—तुमने ठीक सोचा है। और
ह गाथा कही—

सठस्स साठेय्यमिदं सुचिन्तितं,
पच्चोड्डितं पतिकूटस्स कूटं।
फालञ्चे अदेय्यु मूसिका,
कस्मा कुमारं कुलला नो हरेय्यु॥
कूटस्स हि सन्ति कूटकूटा,
भवति चापि निकतिनो निकत्या।

अर्थात् शठ के प्रति शठता यह अच्छा सोचा है। कुटिल के प्र
टलता का जाल फलाया है। यदि चूहे फाल खा जाएँग तो चिड़ि
वे को क्यो नही ले जाएँगी? कुटिल के प्रति कुटिलता का व्यवह
ने वाले मिल जाते हैं। ठग को भी ठगने वाले होते हैं। हे पुत्र-नष्ट
सकी फाल खोई गई है, उसकी फाल दे। तेरे पुत्र को, जिसको फा
ट हुई है, वह न ले जाए।

"स्वामी! मैं इसकी फाल देता हूँ, यदि यह मेरा पुत्र दे।"

"स्वामी! मै देता हूँ, यदि यह मेरे फाल दे।"

इस प्रकार जिसका पुत्र खोया गया था, उसने पुत्र पाया। जिस
ल खोई गई थी, उसने फाल पाई। दोनो कर्मानुसार गये।[1]

पंचतन्त्र मे इसी कथा का निम्नलिखित रूप प्राप्त होता है—

"एक बनिये का लड़का जीविकोपार्जन के लिए देशान्तर गया
के घर में पूर्वजों द्वारा उपार्जित लोहे के सहस्र पलों[2] से निर्मित ए
ाजू था। वह इस तराजू को दूसरे बनिये को सौंप परदेश के लि
ाना हुआ। वहाँ से लौटकर जब उसने तराजू वापिस माँगी
नये ने उत्तर दिया—'तुम्हारी तराजू तो अब नहीं रही, उसे चूहे
।' यह सुनकर तराजू के स्वामी उस बनिये ने कहा—'मित्र, इस
हारा दोष नहीं, यह संसार है ही ऐसा; यहाँ कोई वस्तु शाश्वत नह
न्तु मै नदी में स्नान करने के लिए जाऊँगा, इसलिए अपने बच्चे
ान के उपकरण देकर मेरे साथ भेज दे। बनिये का पुत्र उसके स
ी तक गया। जब अतिथि ने स्नान कर लिया तो उसने बनिये

जातक (द्वितीय खण्ड, भदन्त आनन्द कौसल्यायन) पृ. ३५८—३५९

के को नदी के समीप की एक गुफा मे छिपा दिया और गुफा के अ
बड़ी शिला लगा दी। अथिति जब स्नान कर बनिये के घर पहु
बनिये ने कहा—"हे अभ्यागत, मेरे शिशु को कहाँ छोड़ आये
थि ने कहा—'तुम्हारे शिशु को तो श्येन (शिकरा या बाज) हर
के ले गया।' बनिये ने कहा—'मिथ्यावादिन्! कभी बाज भी शि
हरण कर सकता है? इसलिए या तो मेरा पुत्र लौटा दे, नहीं
मुकद्दमा चलाऊँगा।' दोनों परस्पर विवाद करते हुए न्यायालय
ये। धर्माधिकारियों ने उस अतिथि से कहा कि बनिये के लड़के
पस कर दो। उसने उत्तर दिया—'मैं क्या करूं? मेरे देखते-देख
के किनारे पर से बाज बच्चे का अपहरण करके ले गया।' उन्हो
सुनकर कहा—'कभी बाज भी बच्चा ले जा सकता है?' तब उस
र दिया—

"तुलां लोहसहस्रस्य यत्र खादन्ति मूषिकाः।
राजस्तत्र हरेच्छ्येनो बालकं नात्र संशयः॥"[1]

अर्थात् एक हाजर लोहे के पलों से निर्मित तराजू को जहाँ चूहे
है, वहाँ यदि बाज शिशु का हरण करके ले जाय तो इसमें सन्दे
क्या है?

धर्माधिकारियों ने जब इसका रहस्य पूछा तो तराजू के स्वाम
ये ने सब कथा कह सुनाई। इस पर धर्माधिकारियों को बड़ी हँ
। उन्होंने तराजू के स्वामी को तराजू दिलाई और शिशु के पि
उसका शिशु लौटा कर दोनों बनियों को सन्तुष्ट किया।

असम्भव मूल भाव (*Impossible motif*) से सम्बन्ध रख
ी लोक-कथाएँ केवल ...

प्रचलित है तुलनात्मक अध्ययन के लिए आसाम की एक लोक-कथा यहाँ उद्धृत की जा रही है :—

"एक राजा का लड़का दुनिया देखने के इरादे से घोड़े पर सवार होकर घर से बाहर निकला। चलते-चलते वह एक जंगल में पहुँचा। वहाँ उसके रास्ते में एक गीदड़ बैठा हुआ था। उसने गीदड़ से कहा—"रास्ता छोड़ दे, नहीं तो मेरा घोड़ा तुम्हारी सब हड्डी-पसली तोड़ देगा।" गीदड़ ने कहा—"मैं तो यहाँ से नहीं हट सकता, तुम्हीं अपने घोड़े को एक तरफ़ करके आगे बढ़ जाओ।" राजा के लड़के ने कहा—"ख़ैर, अभी तो अँधेरा हो रहा है, मैं ही घोड़े को एक तरफ़ कर लेता हूँ किन्तु लौटते समय तुम्हें मजा चखाऊँगा।" गीदड़ ने कहा—"देखना है, कौन किसको मजा चखाता है ?"

राजकुमार आगे बढ़ा और चलते-चलते एक तेली के घर के पास आया। घर के बाहर एक घानी थी। उसने अपना घोड़ा उसी से बाँध दिया। अन्दर जाकर तेली से कहा—'मैं रात भर यहीं ठहरना चाहता हूँ।' घोड़े के बाबत उसने तेली से एक शब्द भी नहीं कहा।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब तेली उठा तो उसने कहा—"ओ हो! मेरी घानी ने एक घोड़े को जन्म दिया है," और ऐसा कहकर वह आनन्द-विभोर हो नृत्य करने लगा। यह देख कर राजकुमार के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने तेली से कहा—'रहने दो, घोड़ा तो मेरा है। मैंने ही पिछली रात इसे घानी के बांध दिया था। घानी भी कभी घोड़े को जन्म दे सकती है ?' किन्तु तेली ने एक न सुनी; वह घोड़ा वापिस करने के लिए राजी न हुआ। इस पर राजकुमार ने कचहरी

कहा गया तो उसने उत्तर दिया गवाह तो मेरे पास कोई नहीं मैंने घोड़ा बाधा, उस समय मेरे पास कोई नहीं था। इस प ाधीश ने कहा कि तब तो तुम्हारा मामला ही झूठा है, न तो घोड़ ारा है और न तुमने इसे बाँधा ही है। तब राजकुमार सोच-विचा ड़ गया। उसने तनिक स्मरण करके कहा—'भगवन् ! जब मैं घो सवार होकर आ रहा था, एक गीदड़ ने अवश्य मुझे देखा था ा हो तो उसे ही ले आऊँ।' उसे गीदड़ को गवाह के रूप मे पे ने की आज्ञा दे दी गई। राजकुमार गीदड़ के पास पहुंचा औ से अपने अशिष्ट व्यवहार के लिए क्षमा-याचना की और सब घट सुनाई। गीदड़ ने कहा—'आज तो मैं नहीं चल सकता किन्तु क समय गवाही देने न्यायालय मे उपस्थित हो जाऊँगा।'

दूसरे दिन गीदड़ ने एक दल-दल में लौट लगाई, फिर एक राख के पास गया और उसमें कई बार लौट लगाई। परिणाम यह हु उसका सारा शरीर राख से लिप्त हो गया। न्यायालय में जब वह दे पहुंचा तो न्यायाधीश ने उससे देर का कारण पूछा। गीदड़ ने उ ा—'भगवन् ! मैं आपको क्या बताऊँ, मैं बड़ी विपत्ति में प ा। आप सच मानिये, आज तो समुद्र में आग लग गई। मैं ाने की बड़ी कोशिश की किन्तु सब बेकार ! देख नहीं रहे हैं अ शरीर की हालत !'

न्यायाधीश ने हँस कर कहा—"लोग भी कभी-कभी कैसी असम तें करने लगते है—कभी समुद्र में भी आग लगी है ?"

गीदड़ ने बड़ी शान्ति और नम्रता से उत्तर दिया—"यदि समुद्र

न्यायाधीश को अपनी भूल मालूम हुई उसने घोड़ा राजकुमार क
पिस दिलवा दिया।[1]

आसाम की लोक-कथा की भाँति यही लोक-कथा किंचित् रूपान्त
साथ बिहार मे भी प्रचलित है। बिहारी लोक-कथा का गीदड़ ज
र से पहुंचता है तो वह इस प्रकार सफ़ाई देता है :—

"रास्ते में मैंने एक बड़ा तालाब देखा जिसमें बहुत सी मछलिय
। मैंने इस उद्देश्य से तालाब में आग लगा दी कि मछलियाँ भू
जायें। फिर जब मछलियाँ तैयार हो गईं तो मै उन्हें खाने के लि
हर गया और इस प्रकार यहाँ पहुंचने मे मुझे विलम्ब हो गया। लो
कहा कि पानी में आग का लगना और इस प्रकार मछलियों का भून
ना कैसे सम्भव हो सकता है ? शृगाल ने उत्तर दिया कि यह उ
रह सम्भव है जिस तरह घानी से घोड़े की उत्पत्ति !"

'असम्भव' नामक मूल भाव *(Motif)* से सबन्धित जो लोक-कथ
पर दी गई हैं, उनके अध्ययन से स्पष्ट है कि यह मूल भाव लो
थाकार के हाथ में एक ऐसा अस्त्र है, एक ऐसा राम-बाण है
भावकता की दृष्टि से अचूक कहा जायगा। इस मूल भाव को लेक
था जिस प्रकार आगे बढ़ती है, उसमे एक प्रकार का नाटकीय व्यं
Dramatic irony) भी छिपा रहता है। असम्भव को संभव म
र चलने वाले ही असम्भव की संभवता पर झुंझलाते है अथवा उस
ल्ली उड़ाते हैं ! इससे बड़ा नाटकीय व्यंग्य और क्या होगा ? जब क
कोई पात्र इस ओर उसी असम्भव-पद्धति द्वारा उनका ध्यान आकृ
रता है तब उनकी आँखें खुलती हैं, वही कथा का सर्वाधिक औत्सुक

ी है। मनोविश्लेषण-शास्त्री जिस प्रकार अतीत का स्मरण दिला क
ी का उपचार करते हैं, उसी प्रकार इस असम्भव मूल-भाव द्वारा भ
ी असम्भव-भावना के शिकार उस पात्र का इलाज हो जाता है।

अलंकार-शास्त्र में इस पद्धति से मिलता-जुलता एक अलंकार हो
जसे 'मिथ्याध्यवसिति' कहा गया है। इसमें एक असम्भव या मिथ्
निश्चित करके तब कोई दूसरी बात कही जाती है, और इस प्रक
दूसरी बात भी मिथ्या ही होती है। 'जो आँजे नभ-कुसुम-रस, ल
अहि के कान' उदाहरण-स्वरूप रखा जा सकता है।

राजस्थानी लोकोक्तियो मे भी ऐसे कुछ कहावती वाक्य मिलते
असम्भव अर्थ को प्रकट करते हैं। एक ऐसा ही कहावती वा
जिये—

"आगाई गिया जाणे ऊंट का माथा सूं सींगड़ा गिया" अर्थात् इ
ार चले गये जैसे ऊंट के माथे से सींग चले गये।

'ससै सींग की धनुषड़ी रमै बांझ को पूत' भी एक ऐसी ही कहाव
जिसका आशय यह है कि यदि खरगोश के सींग का धनुष बनाया
तभी बन्ध्या का पुत्र उससे खेल सकता है। यह कहावत 'मिथ्याध
ति' अलंकार के निदर्शनार्थ रखी जा सकती है।[1]

मैं समझता हूँ, असम्भव मूल-भाव अथवा अभिप्राय को द्योति
ने वाले कहावती वाक्यों के पीछे भी ऊपर उद्धृत लोक-कथाओ
ति कहानियाँ प्रचलित रही होंगी।

'असम्भव' मूल-भाव (*Motif*) का एक दूसरा रूप भी देखा जा
जिसमें लोक-वार्ता के दो पात्र बारी-बारी से अनहोनी बातों

नी सुनाते हैं और परस्पर यह शर्त बदी जाती है कि यदि कहान
श्रोता यह कह दे कि 'यह भी कोई होने की बात है ?' तो कथावाच
का सर्वस्व स्वायत्त कर ले। इस प्रकार की कहानियों में जो पा
में हारता है, वह 'इधर कुआँ, उधर खाई' की विषम स्थिति में प
ा है। वह यदि यह कह दे कि 'यह भी कोई होने की बात है
तो उसे अपनी सारी सम्पत्ति से हाथ धोना पड़ता है, अन्यथ
त्मक घटनाओं की परिणति के अनुसार क्षति उठानी पड़ती है
मूल भाव के स्पष्टीकरण के लिए निम्नलिखित लोक-कथा प
ार कीजिये :—

"किसी गाँव में एक प्रसिद्ध ठग रहता था। गाँव छोड़ कर वह ए
ल में चला गया जिसका विस्तार सैकड़ों मील में था। जंगल में
मार्ग जाता था जहाँ एक शिव-मन्दिर व कुआँ बना हुआ था। ठ
इसी स्थान को ठगी के उपयुक्त समझा। वह वहाँ साधु के वेश
ने लगा। जब कोई यात्री उस मार्ग से निकलता तो उसे वह तमा
के लिये बिठा लेता और उससे मीठी-मीठी बातें करता रहता
संध्या हो जाती तो वह यात्री से कहता—'यहाँ के नियमानुस
त्र में कोई नहीं ठहर सकता।' लाचार होकर पथिक को जा
ता। ठग के पाँच लड़के थे जो डाकुओं का वेश बनाकर उस पथि
अँधेरे में लूट लेते। इस प्रकार उस ठग ने बहुत से मनुष्यों को ठग

जंगल के किनारे एक सरदार का गाँव था। एक दिन एक ठगा
ा पथिक सरदार के पास गया और उसे ठग का सारा वृत्तान्त व

क बुद्धिमान और कौन होगा ? आप ही उस शिव-मन्दिर पर जायें
ठगा गये तो दुगना जेवर ले लूंगा और यदि बिन ठगाये लौटे
जेवर आपका होगा।"

पुरोहित ने सरदार की शर्त मान ली और वह एक ऊँट पर सवा
र शिव-मन्दिर को रवाना आ। मन्दिर के पास पहुँचा तो साध
धारी ठग ने आवाज दी। पुरोहित ने ऊँट को अलग बिठा दि
स्वयं ठग के पास जा बैठा। जेवर देखकर ठग ने सोचा—'आ
ड़ा शिकार फँसा है।' बड़े प्रेम से वह पुरोहित के साथ बातें करत
। सन्ध्या होते ही उसने पुरोहित को अपना नियम सुनाया
हित ने उत्तर दिया—'मुझे रात में दिखाई नहीं पड़ता, इसलि
रात भर यहीं ठहरूँगा।' ठग ने कहा—"एक शर्त पर तुम य
र सकते हो। मैं जो बात कहूँ, उसे तुम सुनो और यदि तुम
दो कि 'यह भी कोई होने की बात है!' तो मैं तुम्हारा सब कु
लूं।" पुरोहित ने कहा—"तुम्हारी शर्त तो मुझे स्वीकार है
भी यह शर्त होगी कि मैं भी एक बात कहूँ और यदि सुनकर तुम
कि 'यह भी कोई होने की बात है!' तो मैं तुम्हारे पास मन्दिर
कुछ है, सब ले जाऊँ।" ठग ने शर्त मंजूर कर ली।

ठग ने बात कहना शुरू किया—"एक बार मैंने ५०० रुपयों में ए
या ऊँट खरीदा और उस पर सवार होकर ससुराल गया। जब
पहुँचा, मेरे ससुर, साले और ससुराल की स्त्रियाँ सब खेत काटने
थे। कटे गेहूँ का ढेर खेत के बीच में लगा हुआ था। मैं पहुँ
उन लोगों ने काम बन्द कर दिया, मेरे पास आ बैठे और बातें क

निदान जेलिये से सारे 'लाण' को बिखेरा गया, पर ऊँट न मिला। लाण को गाहा गया पर फिर भी ऊँट का पता न चला। सारा अनाज बरसाया गया, पर फिर भी ऊँट नदारद। ससुराल वालों को भी ऊँट के न मिलने की चिन्ता हुई। उन्होंने सोचा—'सारे अनाज को पिसवाया जाय, चक्की के गले में तो अवश्य ही आ जायगा। अनाज न सही, हम आटा ही बेच देंगे। यह सोचकर अनाज पिसवा डाला पर फिर भी ऊँट न मिला। मैं भी निराश हो गया। अगले दिन मैं घर जाने के लिए तैयार हुआ। मेरे लिये नये अनाज की रोटियाँ बनाई गईं। मैं चौके में बैठा भोजन कर रहा था। जब मैने एक फूली हुई रोटी की पपड़ी हटाई तो मै क्या देखता हूँ कि पपड़ी के नीचे जीन सहित ऊँट बैठा जुगाली कर रहा है।

ठग ने कहानी पूरी की और पुरोहितजी की राय जाननी चाही। पुरोहित ने कहा—'किस्सा तो यह पहले भी सुना था, आप ही का था क्या ?' और चुप रहा।

ठग ने कहा—'बस मेरा किस्सा पूरा हो चुका; अब आप कहिये।

पुरोहित ने कहना शुरू किया—

''मैं मांवड़ा के राजा के पास रहता था। मेरे कार्य से प्रसन्न होकर राजा ने कहा—'पुरोहितजी, जो चाहो, माँग लो।' मैंने खूब सोच-विचार कर गाँव के बाहर की वह १० बीघा भूमि माँग ली जहाँ गायें बैठा करती थीं। राजा ने कहा—'क्या मांगा आपने ? कोई गाँव मांगते। खैर, जैसी आपकी इच्छा। वह भूमि आपके नाम हुई।'

मैं जमीन के पास गया और बोला—'चल, जमीं माता ! मेरे गाँव चल।' जमीन ने कहा—'तू नौकरी करने वाला आदमी है, मेरी कदर नहीं करेगा। मुझे जोते-बोवे तो चलूँ।' [illegible]

नौकरी पर चला गया। वर्षा होने पर लौटा तो देखता क्या हूँ कि जमीन वहाँ पर नहीं है। मैं समझ गया कि जमीन रुष्ट हो गई। दौड़ा हुआ मांवड़ा पहुँचा। बहुत मान-मनावन करके उसे वापस लाया।

सैकड़ों गाड़ी खाद जमीन में डलवाया गया और जुताई करके जुवार बोई गई। खेत में जुआर क्या लगी, वट-वृक्ष के-से पेड़ लग गये। जिसने फसल को देखा, दाँतों तले अंगुलि दबाई। भुट्टे निकले तो मन-मन भर के! फसल पक कर तैयार हुई तो दस-बीस गाँवों के मजदूर बुलवाकर कटवाई गई। भुट्टे तोड़कर डंठल गायों के लिये डाल दिये गये। भुट्टों को इकट्ठा किया तो कई बीघों में पहाड़ के समान ढेर लग गया। लोगों ने अनुमान लगाया कि एक लाख मन जुवार होगी। मैं चौकीदारी के लिए ढेर के ऊपर खाट डालकर सोने लगा। आज प्रातःकाल आँख खुली तो देखता क्या हूँ कि जुआर का ढेर गायब! चोरों के खोज निकाले। इस मंदिर से आगे खोज नहीं जाते हैं। निश्चय ही सारा माल इस मंदिर के अन्दर आया है। लाइये महात्माजी! एक लाख मन जुवार दीजिये।"

ठग यदि कहे कि यह भी कोई होने की बात है, तब तो उसे पुरोहित को मंदिर का सारा धन देना पड़े और यदि बात की हाँ भरे तो एक लाख मन जुआर देना पड़े। इसलिए वह चुप हो रहा। इस पर पुरोहित ने कहा—'चुप क्यों बैठे हो? लाख मन जुवार दो।'

ठग ने कहा—'मैं हारा, तुम जीते। जुवार इतनी मैं नहीं दे सकता; मंदिर में जो कुछ है, ले जाओ।'

पुरोहित अपनी बुद्धिमानी से ठग का सारा धन ले आया। राजा भी प्रसन्न होकर उसे बहुत-सा पुरस्कार दिया।

इस लोक-कथा की परिणति को ...

२. मूल-अभिप्राय (करके दिखाओ)

('Show me how' Motif)

राजस्थान में 'गादड़ँ रै मूंडै कुसल' एक कहावती वाक्य के रूप में प्रचलित है जिसके पीछे निम्नलिखित कथा कही जाती है:—

"एक सिंह पिंजड़े में बन्द था। कोई ब्राह्मण उधर से आ रहा था। सिंह की करुण पुकार सुन कर जब ब्राह्मण ने उसे पिंजड़े से मुक्त कर दिया तो सिंह ने उसे ही खा जाना चाहा। इस पर एक गीदड़ को न्याय के लिए मुकर्रर किया गया। गीदड़ ने अथ से इति तक पूरी कहानी सुनी। सुन कर उसने कहा—'और तो सब ठीक, किन्तु यह बात मेरी समझ के बाहर है कि सिंह पिंजड़े में रहा हो; यह असम्भव है। मुझे करके दिखाओ तो पता चले।' सिंह ने कहा—'इसमें असम्भव क्या है ? मैं अभी करके दिखलाता हूँ।' सिंह पिंजड़े के अन्दर गया और जाते ही पिंजड़ा बन्द कर दिया गया। ब्राह्मण ने कहा—'मेरा न्याय ?' गीदड़ ने उत्तर दिया—'न्याय हो गया न; तुम्हें और क्या चाहिए ? जो उपकार के बदले अपकार करता है, उसकी यही सजा है।'

Southern Textus Simplicior of Panchatantra में उक्त लोक-कथा का निम्नलिखित रूप उपलब्ध होता है :—

"एक ब्राह्मण तीर्थ-यात्रा के लिए काशी जाता है। मार्ग में उसकी एक चीते से भेंट हो जाती है जिसे एक सिपाही ने, जो पानी की तलाश में भटक रहा था, पकड़ कर एक सन्दूक में डाल दिया था। चीता ब्राह्मण से अनुनय-विनय करता है कि तुम मुझे मुक्त कर दो। मुक्त होते ही चीता ब्राह्मण को ...

कृतघ्न प्राणी है। मुझसे दस बछड़े हुए किन्तु अब मेरी वृद्धावस्था में मेरा मालिक मुझे पीटता है और भूखों मारता है। फिर एक बूढ़ा स्त्री से भेंट होती है। वह भी मनुष्य की कृतघ्नता का ही प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करती है। अंत में वे एक गीदड़ के पास पहुँचते है जो पहले तो न्याय करने के लिए अपनी अनिच्छा प्रकट करता है किन्तु अंत में वह इस शर्त पर न्याय करने के लिए राजी हो जाता है कि चीता और ब्राह्मण प्रारम्भ में जिस स्थिति में थे, उसी स्थिति मे वापिस आ जायें। दोनों ने यह शर्त स्वीकार कर ली। सन्दूक में प्रवेश करते ही ब्राह्मण ने सन्दूक को बन्द कर दिया।"

Dubois, Le Pantcha-Tantra पृ. ४६ पर यही कथा निम्नलिखित रूप मे एक ब्राह्मण और मगर को लेकर कही गई है:—

एक मगर एक ब्राह्मण से प्रार्थना करता है कि तुम मुझे गङ्गाजी ले चलो ताकि मै उसके पवित्र जल में निवास कर सकूँ। ब्राह्मण उसे अपने बोरे में डाल लेता है। ब्राह्मण जब मगर को गङ्गा-जल में रखने लगता है, मगर ब्राह्मण की टाँग पकड़ लेता है। ब्राह्मण कृतघ्नता के लिए मगर की भर्त्सना करता है जिस पर मगर उत्तर देता है—'मैं क्या करूँ, जमाना ही ऐसा आ गया। आज तो रक्षक का भक्षक बन जाना ही कृतज्ञता का सच्चा रूप रह गया है।' वे दोनों न्याय के लिए एक आम के पेड़ तथा एक बूढ़ा गाय के पास पहुँचते है। दोनों ही 'मात्स्य-न्याय' का समर्थन करते हैं। तब वे एक लोमड़ी के पास पहुँचते है। लोमड़ी पहले तो ब्राह्मण के विपक्ष में अपना निर्णय देती है किन्तु वह यह जानना चाहती है कि मगर और ब्राह्मण दोनों ने साथ-साथ यात्रा कैसे की होगी? इस पर मगर फिर बोरे मे घुस जाता है, मार डाला जाता और लोमड़ी उसे 'गलगप्प' कर जाती है।'

Verrier Elwin ने अपनी *Folk-Tales of Mahakosh*
क पुस्तक में उक्त लोक-कथा का भिन्न रूप प्रस्तुत किया है जिस
दमी जात महा निर्गुणी' के आधार पर अंत में चीता ब्राह्मण को म
ता है। एलविन का अनुमान है कि संभवतः इस प्रकार की परिण
कारण आदिवासियों की हिन्दुओं के प्रति उनकी विरोधात्मक प्रवृ
हो।[1]

किन्तु जहाँ तक इस मूल अभिप्राय से संबद्ध राजस्थानी कथा
पढ़ने-सुनने में आई हैं, उनमें पशु की क्रूरता और उसकी कृतघ्न
ही प्रदर्शन हुआ है, मनुष्य-जाति की निर्गुणता का नहीं।

राजस्थानी लोक-कथाओं में 'करके दिखाओ' मूल अभिप्राय का ए
रूप भी प्रकट हुआ है, जिसमें कभी-कभी किसी चोर अथवा अ
-प्रकृति के पात्र के विशय में उसके मतिप्रकर्ष के कारण श्रोताओं
नुभूति जागृत हो उठती है। ब्लूमफील्ड के शब्दों में—

"One of the features of the 'Show me how
tif is that the quick wit (matiprakarsha) of
ccessful rogue somttimes wins the sympathy
e hearer, no matter how reprehensible his act
character."

'करके दिखाओं' मूल अभिप्राय के इस रूप के स्पष्टीकरण के लि
'खाफरा' शीर्षक लोक-कथा का निम्नलिखित अंश उल्लेखनीय है:-

"सारा शहर खाफरा चोर से तंग आ गया। राजा के आदमियो
पकड़ने की बहुत कोशिश की पर वह नही पकड़ा जा सका। ज
ा शहर दुखी हो गया तो राजा ने कोतवाल को खुद गश्त लगा

ाया का रूप धर कर उधर गया। कोतवाल ने पूछा—'बुढ़िया ! इत ग गये, तुम कहाँ गई थी ?' बुढ़िया ने कहा—'मैं तो फलां सेठ के य गीत गाकर मिठाई लेकर आ रही हूँ।' कोतवाल बहुत देर से भूर था। उसका मन मिठाई खाने के लिये ललचाया। बुढ़िया ने उ ाई दी और पूछा—'यह काठ का इतना बड़ा टुकड़ा क्यों डाल र '' कोतवाल ने कहा कि यह तो खाफरे चोर को पकड़ने के लिए है या ने कोतवाल से प्रार्थना की —'इसमें चोर कैसे पकड़ा जाता है , भी तो बतावें।' कोतवाल ने बड़ी शान के साथ अपना पांव काठ र दिया और बुढ़िया को चोर पकड़ने की विधि समझाई। कोतवा पैर जब काठ से जकड़ गया तो बुढ़िया का वेश बनाये हुए खाफ ' उसे उसी हालत में छोड़ कर भाग गया। कोतवाल ने मारे श मुँह पर कपड़ा डाल लिया। सुबह जब लोग काठ के पास आये पर लोगों ने उसे चोर समझ कर खूब पीटा। पर जब कपड़ा ह देखा गया तो उसे कोतवाल के रूप में पाकर लोगों के आश्चर्य क ाना न रहा। राजा को जब यह बात मालूम हुई तो वह बड़ा नारा ा।"

उक्त कथा में चोर की प्रत्युत्पन्नमति के कारण श्रोताओं की सहा ा कोतवाल के प्रति जागृत न होकर 'खाफरे' की ओर जागृत हो ती है।

इस प्रकार के उदाहरण अन्य प्रदेशों की लोक-कथाओं में ाते है।

'करके दिखाओ' मूल अभिप्राय के असंख्य उदाहरण पौरस्त्य औ

'मनोवैज्ञानिक प्रेरक भाव' (*Psychic Motif*) के नाम से अभिहित किया है।[1]

अंत में यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि 'गादड़ै रै मूँडै कुशल' शीर्षक जो कहावती वाक्य ऊपर उद्धृत किया गया है, उससे स्पष्ट है कि पंचतंत्र की गूंज राजस्थान की लोक-कथाओ में आज भी सुनाई पड़ती है; और मै तो कहूँगा, पंचतंत्र की कथाओं की गूंज तो न केवल राजस्थनी अथवा भारतीय लोक-कथाओं में ही सुनाई पड़ेगी, 'पंचतंत्र' की सार्वदेशिक यात्रा के कारण उसकी कथाओ की प्रतिध्वनि विश्व की अनेक लोक-कथाओं में भी सुनने को मिलेगी।



[1] *The motif belongs to the Class which I have rubricated as psychic motifs : in this Class the*

३. प्रेरक अभिप्राय (प्रतिध्वनि-शब्द)

An Echo-word motif

Emeneau नामक व्यक्ति ने पहले-पहल लोक-कथाओं में प्रेरक भिप्राय के रूप में 'प्रतिध्वनि-शब्द' की ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट या था। इस अभिप्राय (*Motif*) का तात्पर्य यह है कि लोक-कथा कोई पात्र प्रतिध्वनि-शब्द का प्रयोग करता है जिसे कोई सिंह अथवा ता सुन लेता है और सुन कर समझने लगता है कि प्रतिध्वनि-शब्द रा द्योतित प्राणी स्वयं उसकी अपेक्षा भी भयंकर होगा। इस अभिप्राय स्पष्टीकरण के लिए निम्नलिखित राजस्थानी कथा यहाँ उद्धृत की रही है :—

"किसी गाँव में एक बुढ़िया रहती थी। उसके पास एक अच्छा ज़ा बकरा था। गाँव के मीणों की बुढ़िया के बकरे पर कई दिनों से ज़र थी। वे इस ताक में थे कि किस प्रकार बकरे को चुरा कर खाया ाय। गाँव के पास ही जंगल में एक सिंह रहता था। बकरे को देख र उसके मुँह मे भी पानी भर आया।"

वर्षा के दिन थे। आकाश घने बादलों से आच्छादित था। सन्ध्य समय ही इतना अन्धकार हो गया कि हाथ को हाथ दिखाई नहं ड़ता था। बुढ़िया के टूटे हुए छप्पर से पार होती हुई वर्षा के जल क ोई-कोई बूंद रह-रह कर उसके जर्जर शरीर पर टपक पड़ती थी राह कर बुढ़िया ने कहा—'हे भगवान, मुझे सिंह तथा मीणों का भ [illegible] नहीं लगता जितना 'टपकरे' का लगता है।'

इसी समय दो मीणों ने भी घने अन्धकार का सुअवसर देखकर बकरे को चुराने का निश्चय किया और बाड़े में आ घुसे। अँधेरे मे वे बकरे को इधर-उधर टटोलने लगे। संयोग से एक मीणे का हाथ सिंह की गरदन पर पड़ा। उसके बड़े-बड़े बाल और भारी गरदन को देखते ही चोर ने सोचा—बस, यही बकरा है, और दूसरे चोर को संकेत किया। उधर सिंह को लगा, हो न हो, टपूकड़े ने ही गरदन धर पकड़ी। आज जिन्दा बचना मुश्किल !

चोरों ने उसे खींच कर बाड़े से बाहर किया और यह सोचकर कि बकरा हृष्ट-पुष्ट है, उस पर सवार हो लिये। उनके सवार होते ही सिंह ने जंगल की ओर छलांगें भरना शुरू किया। उसने सोचा—आज तो टपूकड़े के चक्कर में बुरा फंसा। कैसे पिण्ड छूटे ?

चोरों ने देखा कि बकरा बहुत तेज दौड़ रहा है तो उससे चिपट गये और मजबूती से उसकी गरदन के बाल पकड़ लिये। इतने में कड़-कड़ाहट के साथ बिजली चमकी। बिजली के प्रकाश में चोरों ने देखा कि वे बकरे पर नहीं, सिंह पर सवार हैं ! काटो तो खून नहीं, पर कोई उपाय न था। पीठ पर चिपटे रहे।

दौड़ते-दौड़ते सिंह एक वट-वृक्ष के नीचे से गुजरा, जिसकी लम्बी-लम्बी जटायें भूमि तक लटक रही थीं। चोरों को युक्ति सूझी और वे एक जटा को पकड़ पर पेड़ पर चढ़ गये। सिंह ने देखा—टपूकड़े से पिण्ड छूटा; जान बची लाखों पाये। वह बेतहाशा जंगल की ओर भगा।

इस प्रकार भयभीत दशा में सिंह को भगता देखकर एक जरख ने

जरख ने कहा—'आखिर आपसे भी अधिक शक्तिशाली यह टपूकड़
र है ? ऐसा प्रतीत होता है कि आपको भ्रम हो गया। मुझे भी द
हिये, कहाँ पर है वह ?'

सिंह ने कहा—'जाने भी दे; वह जो वट-वृक्ष है, उसी पर वह रु
। मैं तो अब वहाँ नहीं जाने का !'

जरख ने कहा—'आप दूर ही बैठ जाइयेगा। मैं वृक्ष के नीचे जाक
आऊँगा। ऐसी घबराने की क्या बात है ?'

इस प्रकार सलाह करके दोनों चले। सिंह, वृक्ष से बहुत दूर बै
। और जरख वृक्ष के नीचे आकर इधर-उधर जमीन को सूंघता हुअ
ने लगा। चोरों ने जरख को देख लिया। चारों ओर घूम-फिर क
ख पेड़ के नीचे एक जगह बैठ गया। दोनों चोर सलाह करके ठी
की कमर पर एक साथ कूद पड़े। जरख की कमर टूट गई और व
तरह चीखता हुआ भगा। यह सोच कर कि टपूकड़े ने जरख क
पकड़ा, सिंह भी दौड़ खड़ा हुआ।

ये दोनों दौड़े चले जा रहे थे कि मार्ग में उन्हें एक बन्दर मि
। बन्दर ने सिंह को दौड़ते और जरख को कमर घसीटते हुए जा
। तो पूछा—'क्या बात है, आप इस प्रकार क्यों भगे जा रहे हैं ?'

सिंह ने कहा—'क्या पूछता है, आज टपूकड़े ने हम दोनों की ब
ा की है।' जरख ने पुकार कर कहा—'झूठ, कतई झूठ। इन्हों
बहका कर मरवा डाला। वहाँ टपूकड़ा कहाँ था ? वहाँ तो 'दबक
मुझे जाते ही दबक लिया।'

वे तीनों पुनः वट-वृक्ष की ओर चले। सिंह और जरख तो कु
सले पर ही बैठ गये और बन्दर उछलता-कूदता वृक्ष की ओर चल
दर को आते देखकर एक चोर ने दूसरे से कहा—'अबकी बार
दर आ रहा है, इस दुष्ट से कैसे बचेंगे ?' दोनों ने सलाह की औ
के एक खोखरे में घुस कर बैठ गये।

बन्दर पेड़ पर चढ़ा और कूद-कूद कर डाली-डाली, पत्ता-पत्ता दे
या, पर कहीं कुछ पता न चला। विश्राम करने के लिए वह उ
खरे पर जाकर बैठ गया। बन्दर की पूंछ खोखरे के भीतर लट
ी थी। दोनों चोरों ने एक साथ पूंछ को मजबूती से कस कर पक
या। अब तो बन्दर की जान काबू में आ गई। वह बहुत चीखा-पुकार
कारे किये पर पूंछ न छूटी। आखिरकार बन्दर ने पूरी शक्ति ल
फटकारा मारा। पूंछ टूट कर चोरों के हाथ में रह गई और बन्द
ान से नीचे आ गिरा।

शेर और जरख ने बन्दर की चीख-पुकार सुनी तो समझा कि बन्द
पकड़ा गया और वे दोनों दौड़ उठे। जब दौड़ते-दौड़ते वे बहुत दू
ंच गये तो साँस लेने के लिए रुके। थोड़ी देर में बन्दर भी वहाँ
चा। सिंह और जरख ने पूंछहीन बन्दर को देख कर मन ही म
चा—'बड़ा बुद्धिमान् बनता था। खूब रही !' सिंह ने पूछा—'क
या, कैसी रही ? मैंने कहा नहीं था कि टपूकड़े से पार नहीं पा सकते

बन्दर ने कहा—'तुम बड़े धोखेबाज हो, वहाँ टपूकड़ा-चपूकड़ा क
? वहाँ तो खींचा तान थी।' जरख बोल उठा—'दबकन थी, दबकन

उक्त राजस्थानी कथा में 'टपूकड़ा', 'दबकन' और 'खींचातान'–इ
प्रतिध्वनि-शब्दों का प्रयोग हुआ है। 'टपूकड़ा' शब्द तो बुढ़िया
तथा शेष दो शब्दों का प्रयोग जरख और बन्दर ने किया।

इस प्रेरक अभिप्राय के कारण कथा में रोचकता आ जाती है। सि
मझता है 'टपूकड़ा' उससे अधिक भयंकर प्राणी है, जरख समझता
कन' मुझसे अधिक खूँखार है और बन्दर समझता है यह 'खींचाता
भयंकर बला है।

इस प्रकार की लोक-कथाओं में रोचकता का मुख्य कारण है नाटकी
य (*Irony*)। सिंह, जरख और बन्दर कुछ को कुछ समझ बैठते
भयभीत होकर दौड़ खड़े होते है। यह नाटकीय व्यंग्य ही कथा क
सर करने में सहायक हुआ है। जिस प्रकार किसी सिंह से पीछा कि
पर हम बड़ी तेजी से दौड़ पड़ते है, उसी प्रकार 'प्रतिध्वनि-शब्द'
रण यह कथा भी उतनी ही त्वरित गति से आगे बढ़ती है।

यहाँ यह उल्लेख कर देना भी आवश्यक है कि इस कथा के उद्भव
ास और परिणति अथवा आदि, मध्य और अंत, तीनों के मूल
कीय व्यंग्य अपनी छटा दिखा रहा है। कथा का वास्तवि
म्भ बुढ़िया के उस वाक्य में होता है जिसमे उसने कहा था—
वान, मुझे सिंह तथा चोरों का भी उतना भय नहीं लगता जित
कड़े का लगता है।' बुढ़िया की यह उक्ति नाटकीय व्यंग्य की सृ
ती है। बुढ़िया तो निरे अनुकरण-शब्द के अर्थ में 'टपूकड़े' का प्रय
ती है किन्तु सिंह उसे दूसरे अर्थ मे समझ लेता है। बुढ़िया के वा
कारण जिस नाटकीय व्यंग्य की सृष्टि हुई है, वह अलंकारशास्त्र

सकते हैं कि जो वस्तुतः भयंकर है, वही भय का शिकार बन जा
इससे बड़ा नाटकीय व्यंग्य और क्या होगा ?

इस अभिप्राय (*Motif*) से संबन्धित एक काश्मीरी लोक-कथा
स्पर तुलना के लिए यहाँ दी जा रही है—

'एक दिन एक किसान बैलों से खेत जोतने के लिए निकला। ज
ने बैलों को जूड़े में लगा दिया, एक चीता उसके पास आया औ
ने लगा—'स्वामी ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है जिससे मैं तुम्ह
ों बैलों को खा जाऊँ।' किसान ने कहा—'तुम बैलों को रहने द
तुम्हारे भक्ष्य के लिए एक दुधार-गाय अभी लाये देता हूँ।' कि
ान की स्त्री ऐसा करने के लिए राजी नहीं हुई। उसने किसान
ड़े पहने और एक टट्टू पर सवार होकर उस स्थान पर पहुँची ज
ा किसान की प्रतीक्षा कर रहा था। किसान की स्त्री ने कहा—
सों मैंने तीन चीतों का शिकार किया था किन्तु उसके बाद मुझे को
ा नहीं मिला। मैं समझती हूँ, यहाँ मुझे कोई न कोई चीता मि
ागा।' यह सुनते ही दुम दबा कर चीता दौड़ खड़ा हुआ। मार्ग
को एक गीदड़ से भेंट हुई। चीते ने कहा—'मेरे पीछे एक ऐ
ु लगा हुआ है जो चीतों का भक्षक है।' गीदड़ ने उत्तर दिया
ससे तुम भयभीत हो रहे हो, वह तो केवल एक स्त्री है। किन्तु फि
चीते का भय दूर नहीं हुआ और उसने गीदड़ की पूंछ से अप
ु बाँध ली। जब उस स्त्री ने दोनों को इस हालत में देखा, वह कह
ी—'सियार, तुमने बड़ा अच्छा किया जो तुम मेरे लिए इतना हृष
चीता ले आये हो किन्तु तुम्हारे यहाँ तो चीते बहुत हैं, उन

लाया किन्तु चीते ने एक न सुनी। पत्थरों की रगड़ से गीदड़ के
ु-पखेरू ही उड़ गये !'

उक्त काश्मीरी लोक-कथा में 'प्रतिध्वनि-शब्द' के स्थान मे नाटकी
य का ही यत्किंचित् प्रयोग हुआ है और उसी दृष्टि से 'टपूकड़े' शीर्ष
स्थानी लोक-कथा से इसकी तुलना की जा सकती है। किन्तु वेरिय
विन द्वारा संगृहीत 'बीकल की शक्ति' (*The Power of Bika*
क लोक-कथा यहाँ तुलनात्मक दृष्टि से विशेषतः उल्लेखनीय है :-

"किसी गाँव में एक व्यापारी रहता था। उसके एक लड़का था
रात तीन चोर व्यापारी के घर में घुस गये। उसी रात व्यापा
ुत्र को खा जाने के लिए एक चीता भी उसी घर मे घुसा।

शाम के भोजन के बाद लड़के ने अपने पिता से कहा—'मैं आ
काल अपने ससुर के यहाँ जाना चाहता हूँ।' किन्तु व्यापारी
—'मेरे पुत्र, इस समय न जाओ। रात का समय है और फि
कल' का डर है।'

चीते ने यह बातचीत सुनकर मन में सोचा—'रात का नाम
भी सुना है, लेकिन यह 'बीकल' क्या बला है ? यह तो कोई मुझ
भयंकर प्राणी होगा।'

जब घर वाले सब सो गये, चोरों ने सब रुपये चुरा कर एक बोरे
लिये, लेकिन बोरा इतना भारी था कि वे इसे उठा न सके। इ
पशुओं के 'ठाण' में वे एक बैल की तलाश में निकले। चीता

ीं बैठा हुआ था। अंधेरे में चोरों ने उसे ही बैल समझा, उस
वन में रस्सी डाल दी और उसकी पीठ पर बोरा लाद दिया। चं
समझा—'यही बीकल है। इससे वह चुपचाप बोरा लेकर आगे चल

प्रातःकाल जब चोरों ने चीते को देखा तो उनके होश उड़ गये
अपनी जान लेकर भगे। पास में एक नाला था जिसके किनारे ची
ा गया। चीते के अनुनय-विनय करने पर एक ग्वाले ने, जो पास
यें चरा रहा था, बोरा चीते की पीठ पर से उतारा और उसे मु
ः किया। रुपयों का थैला ग्वाला अपने घर ले आया।

एक दिन चीता ग्वाले को ले भागा। ग्वाले की स्त्री उसे ढूंढ़त
ती चीते के पास पहुँची। चीते ने पूछा—'यह कौन है?' ग्वाले
र दिया—'यह बीकल है।' इस पर चीता भयभीत हो उठा औ
ने ग्वाले से कहा—'यदि तुम मुझे कहीं छिपा दोगे तो मैं तुम्हें न
ऊँगा।' तब ग्वाले की स्त्री ने कहा—'क्या बीकल के भक्ष्य के लि
ाँ अच्छे चीते मिल सकते हैं?' ग्वाले ने कहा—'यहाँ कोई ची
ले या न मिले, मैं नहीं कह सकता।' तब स्त्री ने कहा—'तुम्ह
ीप ही जमीन पर वह क्या है?' ग्वाले ने कहा—'वह तो नि
ड़ों का गट्ठर है।' स्त्री ने कहा—'उस पर पत्थर मार कर जरा दे
सही।' चीते ने ग्वाले से कहा—'मुझ पर धीरे से पत्थर मारो
ले ने चीते के सिर पर धीरे से पत्थर मारा। लेकिन उसकी स
कहा—'धीरे नहीं, जोर से पत्थर मारो।' चीते ने ग्वाले से कहा—
ा जोर से पत्थर मारो।' ग्वाले ने पूरी शक्ति से चीते पर पत्थरों
र किया और चीते की मृत्यु हो गई।

उक्त लोक-कथा में भी राजस्थानी कथा की भाँति प्रतिध्वनि-श
मूल अभिप्राय का प्रयोग हुआ है, जिसमें साथ-साथ नाटकीय व्यंग्य
त्कार भी है।

राजस्थानी लोक-कथाओं में प्रतिध्वनि-शब्द के मूल अभिप्राय
वह रूप भी उपलब्ध होता है जिसमें शब्द ध्वन्यर्थव्यंजक *(On
atcproeic)* न होकर सादृश्य *(Analogy)* के आधार पर
होता है। शेष चमत्कार-सृष्टि दोनों प्रकार की कथाओं में प्रा
ान रूप से देखने में आती है।

'घोड़ी' का पुल्लिङ्ग रूप जैसे 'घोड़ा' होता है, उसी प्रकार साह
आधार पर 'इन्द्र की परी का पुल्लिङ्ग रूप 'इन्द्र का परा' गढ़ा
ता है। निम्नलिखित राजस्थानी कथा में शब्द-निर्माण की इ
दृश्य-पद्धति का आश्रय लिया गया है। कथा इस प्रकार है :—

"एक दिन एक किसान जब खेत से लौट रहा था तो रात का घ
कार चारों ओर फैल चुका था। किसान के सर पर पानी खींचने
ी रस्सा था और बगल में एक भेड़ का बच्चा था। मार्ग में उसे ए
मिला। भूत ने किसान से पूछा—'तू कौन है ?' किसान ने पूछा—
ा है ?' भूत ने कहा—'मैं भूत हूँ।' किसान ने कहा—'मेरा क्या पूछ
मैं हूँ इन्द्र का परा।' भूत ने कहा—'आज मुझे बहुत भूख लग र
तू ठीक मौके पर मिल गया। मैं तुझे अभी खाये डालता हूँ
ान ने कहा—'मित्र ! तू खूब मिला। हमारे देवताओं के राजा इन्द्र
ली हो रही है। धन्वंतरि ने मालिश के लिए भूत का तेल बताया है
ी तेरा तेल निकालता हूँ।' भूत ने कहा—'पहले यह निर्णय कर ले

भेड़ के बच्चे को बगल से निकाल कर फेंका और कहा—'देख !' भूत ने अपनी चोटी को खोल कर दिखाया और कहा—'इतनी बड़ी चोटी दिखला।' किसान ने अपने भारी रस्से को खोल कर भूत के ऊपर फेंका। रस्से की कई आंटें भूत की गर्दन में पड़ गईं।

भूत घबराया। उसने सोचा—'वास्तव में यह कोई इन्द्र का परा है।' अब तो भूत बहुत गिड़गिड़ाया। अंत में किसान ने भूत को इस शर्त पर छोड़ दिया कि वह नित्य रात्रि को १० मन गेहूं किसान के घर में डाल जाया करे। किसान अपने खर्च-जितने गेहूं रख लेता, बाकी रोज बेच डालता। बड़े चैन से उसके दिन कटने लगे।

एक दिन भूत को उसका मित्र एक दूसरा भूत मिला। उसने सब हाल सुन कर कहा—'इन्द्र की परियाँ तो सुनी हैं, यह 'इन्द्र का परा' तुम्हीं से सुना। जरा मुझे बतला, उस इन्द्र के परे का घर। आज मैं ही उससे निबट लूंगा। तुम आज आराम करो।'

पहले भूत ने उसे किसान का घर बता दिया। किसान के घर कई दिनों से एक बिल्ली परच गई थी, 'हिल' रही थी। वह घर का बहुत नुकसान करती रहती थी। किसान उससे तंग आ गया था। उसने सोचा—आज बिल्ली को अवश्य दण्ड दूंगा। किसान ने घर का दरवाजा, खिड़कियां आदि सब बन्द कर दिये; केवल एक छोटी ताक खुली रखी और उस ताक पर रस्सी का फन्दा जमा दिया तथा स्वयं निगरानी के लिए जगता रहा।

दूसरा भूत अंधेरा होते ही वहाँ पहुंचा। उसने सोचा—'पहले जरा

किसान ने पूछा—'तू कौन है ?' भूत ने कहा—'मै गेहूँ लाने वाले भूत का मित्र हूँ ।' किसान ने कहा—'तू यहाँ क्या करता था ?' भूत ने कहा—'मै यह पूछने आया था कि गेहूँ पिसवाने में आपको कठिनाई होती होगी, क्यों नही, आटा ही ला दिया जाय ।'

किसान ने कहा—'ठीक है, कल से १० मन गेहूँ का आटा डाल जाया करो ।'

अब पहला भूत नित्य १० मन गेहूँ लाता और दूसरा उसका आटा पीसता । इस प्रकार वह बुद्धिमान किसान बड़े आनन्द से जीवन बसर करने लगा ।"

प्रतिध्वनि-शब्द के प्रेरक अभिप्राय से संबन्ध रखने वाली जितनी लोक-कथाएँ मिलती है, उनमे प्रायः सभी में संयोग-तत्त्व का समावेश देखने में आता है । दूसरी बात यह है कि जो बढ़-बढ़ कर बातें बनाते हैं, शेखी बघारते हैं अथवा हवा बाँधते हैं, उन्हें ही संयोग से नीचा देखना पड़ता है जिससे एक प्रकार के अद्भुत व्यंग्य की सृष्टि होती है। लोक-कथाकार के हाथ में सयोग-तत्त्व एक बड़ा भारी कौशल (*Device*) है, कथा को यथेच्छ गति देने के लिए एक महत्त्वपूर्ण साधन है ।



४. मूल-अभिप्राय (उपश्रवण)

(*Overhearing Motif*)

प्रायः सभी देशों की लोक-कथाओं में देखा जाता है कि पशु-पक्षियों की अपनी एक अलग ही भाषा होती है। इनमें भी पशुओं की भाषा की अपेक्षा पक्षियों की भाषा का ही विशेष हाथ रहता है। सम्भवतः इसका मुख्य कारण यह है कि पक्षी तो उड़कर दूर-दूर तक के अगम्य स्थानों तक जा सकता है जबकि किसी पशु के लिए ऐसा करना सम्भव नहीं। पक्षी किसी जादू के द्वीप की यात्रा कर सकता है, किसी गुप्त गुफा में उसका प्रवेश हो सकता है, चाहे जिस पेड़ पर वह बैठ सकता है, किसी कमरे की खिड़की पर स्थित होकर जो कुछ अन्दर हो रहा है, उसे वह देख सकता है। आदिम मानव की धारणा के अनुसार पक्षियों में बड़ी सूझ-बूझ और समझ होती है और बहुत से रहस्यों का ज्ञान उन्हें रहता है।

लोक-कथा का जब कोई नायक किसी विपत्ति या संकट में पड़ जाता है, वह पशु या पक्षी के परस्पर बात-चीत करते हुए किसी जोड़े को देखता है और पीछे से छिपकर वह उस वार्तालाप को सुन लेता है, जिसके अनुसार काम करने से वह उस विपत्ति या संकट से छुटकारा पा जाता है।

इस अभिप्राय का प्रयोग कथा-भाग को गति देने के लिए होता है। लोक-कथा का नायक जब संकट में पड़ जाता है, श्रोता या पाठक ... प्रश्न नहीं ...



उपलक्षण समम मूल अभिप्राय बहुत प्राचीन जान पड़ता है छान्दोग्य उपनिषद् के चतुर्थ अध्याय में राजा जानश्रुति और रैक्व का उपाख्यान मिलता है। इस उपाख्यान में उक्त अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। जानश्रुति ने समस्त दिशाओं में ग्राम और नगरों के भीतर धर्म-शालाएँ बनवा दी थीं। इससे उसका यह अभिप्राय था कि उन धर्म-शालाओं में निवास करने वाले लोग उसी के द्वारा दिया हुआ अन्न ग्रहण करेंगे।

एक बार गर्मी के दिनों में राजा अपने महल की अट्टालिका पर बैठा हुआ था। उसी समय रात्रि में उधर से हंस उड़कर गये। उनमें से एक हंस ने दूसरे हंस से कहा—"अरे ओ भल्लाक्ष! ओ भल्लाक्ष! देख, जानश्रुति पौत्रायण का तेज द्युलोक के समान फैला हुआ है; तू उसका स्पर्श न कर, वह तुझे भस्म न कर डाले।" उससे दूसरे (अग्रगामी) हंस ने कहा—"अरे! तू किस महत्त्व से युक्त रहने वाले इस राजा के प्रति इस तरह सम्मानित वचन कह रहा है? क्या तू इसे गाड़ी वाले रैक्व के समान बतलाता है?" इस पर उसने पूछा—'यह जो गाड़ी वाला रैक्व है, कैसा है?' इस प्रकार कहते हुए उस हंस से दूसरे आगे चलने वाले हंस ने कहा—'अरे! यह बेचारा राजा तो बहुत तुच्छ है। "निकृष्टोऽयं राजा वराकः।" रैक्व की और उसकी क्या समता? जो कुछ प्रजा संसार में धर्म-कार्य करती है, वह सबका सब रैक्व के धर्म में समा जाता है।' इस बात को जानश्रुति पौत्रायण ने सुन लिया।[१] वह रैक्व के पास सहस्र गौएँ, हार, खच्चरियों से युक्त रथ तथा रैक्व की भार्या बनाने के लिए अपनी —

ही निश्चित कर दिया। इसके बाद रैक्व ने जानश्रुति को संवर्ग विद्य
का उपदेश दिया।[२]

जातक, कथा-कोश, कथासरित्सागर आदि में 'उपश्रवण' नामक
अभिप्राय के अनेक उदाहरण मिलते हैं। 'कथाकोश' से एक उदाहरण
लीजिये—

"एक पक्षी अपने बच्चे से कह रहा था कि अपने समीपवर्ती शह
की राजकुमारी अन्धी है। बच्चे ने कहा—'क्या कोई ऐसा उपाय नहीं
जिससे उसकी आँखें अच्छी हो जायें?' पक्षी ने उत्तर दिया—'उपाय
क्यों नहीं? उपाय तो है किन्तु मैं रात को नहीं, दिन में बतलाऊँगा
हो सकता है, रात को कहीं कोई छिपा हुआ हो जो हमारी बात को
सुन ले।' किन्तु पक्षी के बच्चे ने जब बहुत हठ किया तो उस पक्षी ने
कहा—'इस बरगद के पेड़ की जड़ों के चारों ओर जो लता फैली हुई
है, उसके रस से यदि आँखें धोई जायं तो राजकुमारी को तुरन्त दिखलाई
पड़ने लग जायगा।' एक राजकुमार जो स्वयं अन्धा था, उस बरगद
के नीचे छिपा खड़ा था। उसने इस वार्तालाप को सुन लिया। उसने
लता के रस से अपनी आँखें धो डालीं। ऐसा करते ही उसे दिखलाई
पड़ने लग गया। तब वह राजकुमार तुरन्त ही समीपवर्ती नगर में
गया और राजकुमारी की आँखों पर भी उसने वही प्रयोग किया
राजकुमारी की भी गई हुई आँखें लौट आईं। परिणामस्वरूप राजकुमार
और राजकुमारी का विवाह हो गया और राजकुमारी के पिता ने
राजकुमार को दहेज में अपना आधा राज्य भी दे दिया।[१]

इस अभिप्राय से संबन्ध रखने वाली अनेक राजस्थानी लोक-कथाएं
उपलब्ध हैं जिनमें से एक यहाँ दी जा रही है :—

कोकशास्त्र को जानने वाली एक साहूकार की लड़की थी । प
यों की बोली वह समझती थी । एक बार आधी रात के समय
ार बोल उठा—"नदी में एक मुर्दा बहा जा रहा है, उसकी ज
ार लाल हैं, कोई सुन रहा हो तो लाल निकाल ले ।" साहूकार
ने इतना सुनते ही कटार हाथ में ली और अकेली ही महल
र कर चल दी । रास्ते में दो ठग मिल गये । उन्होंने उसके
ूषण छीन लिये और उसकी कटार भी हस्तगत करली । इतने
र साहूकार का लड़का निद्रा से जगा । पास में जब साहूकार
ी को उसने नहीं देखा तो चिराग जलाई और उसकी तलाश
ला । कुछ दूर चलने पर उसे साहूकार की लड़की दिखलाई पड़ी
कार के लड़के ने चिराग तो बुझा दी और वह यह देखने के लि
कार की लडकी के पीछे हो लिया कि यह चोरी करने जाती
वा किसी प्रकार का अन्याय करने जाती है । साहूकार की लड़
के समीप गई । मुर्दे को पकड़ कर वह उसे किनारे पर ले आई
उसके पास कटारी तो थी नहीं, उसने अपने दांतों से मुर्दे की जाँ
ड़ी और चारों लाल उसमें से निकाल ली । यह देखकर साहूकार क
तो हक्का-बक्का रह गया । उसने अपने मन में कहा—यह तो डाकि
वह पीछे लौट चला और उसने अपने पिता से कहा—'यह ड
ी स्त्री है, वह मेरे काम की नहीं । इसे महल में रखा तो मैं विदे
ला जाऊँगा अथवा कटारी खाकर मर जाऊँगा ।' लड़के के पिता
को पीहर भेजने का विचार किया । रथ जुड़ाया और श्वसुर
छे-पीछे चला । एक बरगद के पेड़ के नीचे रथ ठहरा । वहाँ पा

उससे फायदा उठा ले ।' यह सुनते ही साहूकार की बेटी बोली– "शृगाल ने तो यह किया और अब हे कौवे ! तू क्या करने वाला है ? इतने में श्वसुर जग उठा । उसने पूछा—'बेटी ! यह क्या कह रही हो ? साहूकार की बेटी ने कहा—'श्वसुरजी ! मैं पशु-पक्षियों की बोली समझती हूँ । सियार ने तो मुर्दे की जाँघ में चार लाल बतलाई थीं और अब यह कौवा बालाजी की इस मूर्ति के नीचे चार बर्तनों की खबर दे रहा है ।' श्वसुर ने बालाजी की मूर्ति को तो उठाकर एक ओर रखा और चारों बर्तन निकाले । श्वसुर ने कहा—'बेटी ! वापिस चल ।' साहूकार की बेटी ने उत्तर दिया—'पति तो मूर्ख है, बात-बात पर व्यर्थ का हठ करने लगता है ।' श्वसुर ने कहा—'बेटी ! पति तो जैसा हो, भुगतना ही पड़ता है ।' अन्त में श्वसुर की बात मान कर साहूकार की बेटी वापिस आ गई । श्वसुर ने अपने मूर्ख लड़के को चार लाल तथा रुपयों और मोहरों से भरे चारो बर्तन सम्हला दिये । मूर्ख भी प्रसन्न हो गया । उसका घर-बार बस गया । जैसा उसका घरबार बसा, वैसा ही सब किसी का बसे ।[1]

ब्लूमफील्ड के मतानुसार 'उपश्रवण' नामक मूल अभिप्राय का प्रयोग एक कथा-कौशल के रूप में होता है, केवल इस अभिप्राय को लेकर शायद ही कोई कथा कही जाती हो । किन्तु 'साहूकार की बेटी' शीर्षक गी कथा ऊपर उद्धृत की गई है, वह मुख्यतः उपश्रवण नामक मूल अभिप्राय की ही कथा है; समूची कथा इसी अभिप्राय को लेकर लती है ।

Specimens of the Dialects spoken in the state of jeum...

फिर भी ब्लूमफील्ड का यह कहना यथार्थ है कि उपश्रवण नामक अभिप्राय का प्रयोग अधिकतर कथा को गति देने के लिए ही किया जाता है। 'चौबोली' नामक प्रसिद्ध राजस्थानी लोक-कथा में इस अभिप्राय का प्रयोग कथा-कौशल के रूप में ही हुआ है। इस सम्बन्ध मे उक्त कथा का निम्नलिखित अंश प्रासंगिक समझ कर यहाँ उद्धृत किया जा रहा है :—

"एक दिन राजा भोजन कर रहा था और रानीजी मक्खियाँ उड़ा रही थी। पक्का आंगन था। वहाँ एक चींटी चावल लेकर चली। उसी समय दूसरी चींटी आकर छीनने के लिए लिपट गई। तब चींटी ने कहा—'मेरे आगे से क्यों छीनती है ? ये चावल राजा भोज की थाली में बहुत पड़े हैं।' इस पर चींटी ने कहा—'हमारे मेहमान आये हैं, मुझे ले जाने दे।' ऐसी बात समझ कर राजा भोज हँसा। राजा सब जीवो की भाषा जानता था। तब रानी ने पूछा कि महाराज, आप किस कारण हँसे ? राजा ने इन्कार किया। रानी बहुत आग्रह करके पूछने लगी कि महाराज, मुझे हँसने का वृतान्त कहो। राजा ने मन में विचार किया—इन्कार कर गया तो अब मै कहने का नही। यदि कह दिया तो मरण होगा। रानी दातुन नहीं करती। तब राजा ने कहा के गंगाजी के तट पर बात कहूँगा। राजा चला। गंगाजी के समीप संहकर शहर था। उसके बाहर आकर राजा उतरा। वहाँ से पाँच गेल की दूरी पर एक नदी के समीप जंगल में डेरा डाला गया। नदी ी शोभा देखकर राजा जंगल में गया जहाँ एकान्त था। आगे एक आ था। कुएँ के अन्दर ककड़ी के बेल के बहुत से फल लगे हुए थे। एँ के पास भेड़-बकरियों का झुण्ड ...

सुनकर राजा ने विचार किया कि मै चौदह विद्या निधान और मेरी बुद्धि का भेद एक बकरे ने प्रकट कर दिया।"[1]

उक्त अवतरण से स्पष्ट है कि लोक-कथाओ के चींटी जैसे क्षुद्र जन्तुओं और बकरा-बकरी जैसे पशुओ के पास भी मानव-जाति से संबद्ध बहुत से रहस्य सुरक्षित रहते है जिनका उद्घाटन उनकी पारस्परिक वार्तालाप द्वारा हो जाता है। कहानी का प्रमुख पात्र इस प्रकार के रहस्योद्घाटन से लाभान्वित होता है। यद्यपि 'चौबोली' कहानी में भोज की रानी रहस्योद्घाटन करने का हठ नही करती, वह समझ जाती है कि राजा भोज 'चौबोली' से विवाह करना चाहता है, गङ्गा की यात्रा की बात तो केवल बहानेबाजी है किन्तु फिर भी यह निश्चित है कि बकरा-बकरी के पारस्परिक वार्तालाप को सुनने के बाद राजा भोज स्त्री के लिए अपने प्राणों को खतरे में नहीं डालता।

लोक-कथाओं का नायक, जैसा पहले कहा जा चुका है, पशु-पक्षियो की भाषा जानने वाला होता है और वह जब किसी विपत्ति में पड़ जाता है तो पशु-पक्षियो की पारस्परिक वार्ता को सुनकर तथा तदनुकूल कार्य करके विपत्ति से छुटकारा पा जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि उपश्रवण नामक मूल अभिप्राय का सम्बन्ध क्षुद्र जन्तुओं तथा पशु-पक्षियों की भाषा और उनके पारस्परिक वार्तालाप से है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि दो व्यक्तियों की बात को छिपकर सुन लेने से किसी रहस्य का पता नहीं चलता। ऐसी भी लोक-कथाएँ उपलब्ध हैं जिनमें दो व्यक्तियों के वार्तालाप के द्वारा किसी रहस्य का उद्घाटन होता है। उदाहरण के लिए 'सच्ची मितराई' शीर्षक एक राजस्थानी कहानी लीजिये जिसमें ...

नवल की हत्या कर डालता है। नवल की स्त्री को वंशी पर शक था। एक शाम को वह लुक-छिप कर बंशी की झोंपड़ी के पीछे खड़ी हो गई। बंशी ने अपनी स्त्री को आवाज दी कि मैं तेरे लिए जो गहने लाया हूँ, उन्हें पहन कर तो दिखला, ये तुझे कैसे लगते है? स्त्री ने गहने पहन कर दिखलाये और अपने पति से पूछा—"इतने गहने आपने मेरे लिए कैसे बनवा दिये?" बंशी मुस्करा दिया और बोल उठा—'अरी पगली! दोस्त भी तो ऐसा ही पकड़ा था। सेठजी का लड़का नवल बहुत-सा धन लेकर परदेश गया था। मौक़ा पाकर उसे खत्म कर दिया और ये गहने तुम्हारे लिए बन गये।"

इस कहानी मे नवल की स्त्री, बंशी और उसकी पत्नी के वार्तालाप को छिप कर सुनती है और इस दृष्टि से यह भी एक प्रकार का 'उपश्रवण' तो है ही; किन्तु यह उपश्रवण कथा-कौशल के रूप में प्रयुक्त नहीं हुआ है, इसलिए इसे उपश्रवण नामक मूल अभिप्राय नहीं माना जाना चाहिए।

ब्लूमफील्ड का इरादा हिन्दू-कथाओं के अभिप्रायों का एक विश्वकोश तैयार करने का था। उनका विचार था कि मूल अभिप्रायों में 'उपश्रवण' नामक अभिप्राय का स्थान उसकी सर्वसामान्यता और बहुमूल्यता के कारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रहेगा।[1]

---

[1] *Bloomfield thought that the 'Overhearing' Motif would figure large 'as one of the most common & precious devices of stories' in his future Encyclopaedia of Hindu Fiction. Its intention is by allowing the h...*

राजस्थानी लोक-कथाओं में भी उक्त अभिप्राय के अनेक रूप उपलब्ध होते हैं जिनमें से कुछ का ऊपर उल्लेख किया गया है।



---

information or instruction in perplexing situations The motif is generally what is called 'progressive'. It is rarely the main theme of the story, but it is a very valuable way of advancing the plot in circumstances where the usual means of imparting information to the characters by letters, newspapers or messages are not available.

Most commonly it is a bird which is overheard; on the whole the conversation of birds is the standard source of information. 'A little bird told me' seems to be the rock bottom of the notion founded on the sincere folklore feeling that the chirp and twitter of birds is the prime and natural source of otherwise inaccessible information, and Bloomfield goes on to point

५. मूल अभिप्राय (*Motif*)

परकाया-प्रवेश अथवा पन्द्रहवीं विद्या

(*Entering another's body*).

योग-शास्त्र संबन्धी ग्रन्थों में योग की शक्तियों द्वारा असाधारण कृत्यों की सिद्धि के उल्लेख मिलते हैं। परकाया-प्रवेश भी ऐसे ही असाधारण कृत्यों में से एक है। कथासरित्सागर में इसे 'अन्यदेहप्रवेशको योगः' तथा 'देहान्तर-आवेश' के नाम से अभिहित किया गया है। अन्य ग्रन्थों में 'परकाया प्रवेश' को 'पर पुर प्रवेश' भी कहा गया है। जायसी के 'पदमावत' में भी अनेक स्थानों पर 'परकाया प्रवेश' का प्रसंग उपलब्ध होता है। उदाहरणार्थ—

रूप तुम्हार जीव कै, आपन पिंड कमावा फेरि।
आपु हेराइ रहा तेहि खँड होइ काल न पावै हेरि ॥१॥
अस वह जोगी अमर भा पर काया परवेस।
आव काल तुम्हहि तहँ देखै बहुरै कै आदेस ॥२॥

(गन्धर्व सेन मंत्री खंड)

अर्थात् अपने जीव को तुम्हारे रूप का करके उस रत्नसेन ने पर काया-प्रवेश द्वारा दूसरा शरीर प्राप्त किया है। तुम्हारे शरीर के एक खण्ड (हृदय) में उसका आपा छिपा हुआ है। अतएव मृत्यु उसे ढूँढ़ नहीं पाती ॥१॥

इस प्रकार परकाया-प्रवेश से वह जोगी अमर हो गया है। काल आता है और उसके घर में तुम्हें देखता है और

जायसी का पदमावत एक ऐसा काव्य है जिसमें योग-दर्शन औ
क-कथा दोनों के तत्वों का समावेश हुआ है। 'परकाया प्रवेश'
इस प्रकार का मूल अभिप्राय है जिसमें कथा और दर्शन दोनों
त्र सम्मिलन देखने को मिलता है।

भारतवर्ष मे चिरकाल से 'परकाया-प्रवेश' में विश्वास कर
लोग रहे हैं। बौद्ध ग्रन्थों में बतलाया गया है कि चन्द्रगु
की मृत्यु पर उसके मृत-शरीर में देवगर्भ नामक एक यक्ष प्रवेश
था। बहुत से हिन्दू इस बात में विश्वास करते हैं कि जब मनु
ता है तो उसकी आत्मा उसे छोड़ कर अन्यत्र भ्रमण करने के लि
कल जाती है। इसीलिए सोते हुए मनुष्य से छेड़-छाड़ करना अथ
से मजाक करना बहुत बुरा समझा जाता है। यदि सोये हुए मनु
मुख किसी प्रकार के लेप द्वारा विकृत कर दिया जाय तो संभव
रण के बाद लौट कर आई हुई आत्मा उस व्यक्ति को न पहचान
मृतक के रूप में छोड़ कर चली जाय।[1]

पर काया-प्रवेश जो हमारे योग-दर्शन का सिद्धान्त है, उसका प्रवे
हमारी लोक-कथाओं में हो गया है तो इसमें किसी प्रकार
श्चर्य की बात नहीं।

लोक-कथाओं में परकाया-प्रवेश की सक्रिय और निष्क्रिय दो प्रक
पद्धतियां दिखलाई पड़ती हैं। सक्रिय पद्धति का रूप वह है जहाँ
रीर खाली छोड़ दिया जाता है, दूसरा, जो प्रायः शत्रु होता है, श
प्रवेश कर जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि शरीर के
लिक स्वामी का फिर अपना वह शरीर नहीं रह जाता। हो सक

र और उसे अपने पूर्व-शरीर को प्राप्त करने का सुअवसर मिल जाय।
कथ्य परकाया-प्रवेश' के उदाहरण-स्वरूप राजस्थानी की एक
नलिखित लोक-कथा लीजिये—

"राजा भोज उज्जयिनी में राज्य करता था। उसके एक रानी थी
का नाम था भानमती। उसने भोज से कहा—'वैसे तो आप चौदह
ा निधान हैं, किन्तु काया-पलट की १५ वीं विद्या और सीखिये।'
री स्त्री की बात मान कर भोज १५ वीं विद्या सीखने के लिए पाटन
। पाटन शहर से एक कोस की दूरी पर एक साधु रहता था। उसका
ा भिक्षा माँगने के लिए शहर में जाया करता था। राजा भोज ने
ाड्डु द्रव्य और व्यंजन देकर चेले को खुश कर लिया। साधु काया-
ट अथवा परकाया-प्रवेश की १५ वीं विद्या जानता था। भोज ने
से कहा—'तुम्हारा गुरु इस विलक्षण विद्या को जानता है। वह तो
वृद्ध हो चला, तुम उससे यह विद्या क्यों नहीं सीख लेते ?' चेले ने
ा—'मेरा गुरु आज ही मुझे इस विद्या के सम्बन्ध में मंत्र की दीक्षा
।' एक धोबी ने भी यह बात सुन ली। इसलिए राजा भोज और
धोबी दोनों चेले के साथ-साथ चले। साधु की कुटी पर पहुँच कर
ा भोज और धोबी दोनों छिप गये। गुरु ने १५ वीं विद्या का उपदेश
म्भ किया किन्तु चेले को ऊँघ आने लगी। भोज इस बात को ताड़
ा। इसलिए चेले की जगह हुंकारा वह देता गया। जब उपदेश समाप्त
ा तो साधु ने चेले से पूछा—'तुमने मंत्रोपदेश भली भाँति समझ
या या नहीं ?' चेले ने कहा—'गुरुवर, मुझे तो बीच में ही ऊंघ आने
ी थी, इसलिए मैं तो कुछ समझ नहीं पाया।' साधु ने पूछा 'तो फिर

राजा १५ वीं विद्या तो सीख ही गया था। साधु को पीछे आत
ा देख कर वह शुक होकर उड़ा। साधु ने शुकी बन कर उसका पीछ
ा। शुक उड़ता-उड़ता पाटन की राजकुमारी के महल में चला गय
कुमारी ने उसे पकड़ लिया। शुकी भी उड़ती-उड़ती जब उधर पहुँच
उसे मार कर वहाँ से उड़ा दिया। साधु बिल्ली बन गया और
क में था कि किसी प्रकार वह शुक का काम तमाम कर दे। रा
ा में शुक बना रहता और रात को अपने असली रूप में प्रकट
ता। राजा ने राजकुमारी से कहा कि यह जो बिल्ली घूमती दिखल
ती है, यह मामूली बिल्ली नहीं है, यह मेरे प्राणों की ग्राहक है। शु
रहने में मेरी कुशल नहीं। यह सोच कर राजा मोतियों का हार ब
ा और राजकुमारी के गले में बैठ गया। साधु ने बाजीगर का वे
या और खेल दिखला-दिखला कर पाटन के राजा को रिझा लिया
ा ने साधु से वरदान माँगने के लिए कहा। उसने वरदान के रू
राजकुमारी के हार की माँग की। राजकुमारी ने हार बन कर बै
राजा भोज से परामर्श किया। हार ने कहा-मोती तोड़कर दे दो औ
' को मुट्ठी में रख लो। राजकुमारी ने मोती तोड़ कर दे दिये औ
' को मुट्ठी में रख लिया। बाजीगर ने कुत्ता बन कर मोती चुगे
ा भोज ने राजकुमारी से कहा—'मेरु छोड़ दे।' मेरु छोड़ने के ब
ा भोज बिल्ली बन गया और उसने कुत्ते की नसें तोड़ डाली
कुमारी का पिता पाटन का राजा यह सब देख कर अवाक् रह गया
कुमारी ने उसे सब तथ्यों से अवगत कराया। राजा बिल्ली से पि
ा बन गया और पाटन की राजकुमारी से उसका विवाह हो गया।

एक बार राजा शिकार के लिए गया और उसने उस धोबी को भी जिसने १५ वीं विद्या सीख ली थी, अपने साथ ले लिया। राजा ने हरिण और हरिणी के जोड़े को देखा। इस युगल को देख कर राजा मुग्ध हो गया। उसने हरिण को मार डाला और स्वयं हरिण बनने की इच्छा से उस धोबी को कहने लगा—'मैं हरिण की काया में प्रवेश कर रहा हूँ। तुम मेरी 'खोड़' (काया) के मक्खी न लगने देना।' राजा हरिण की काया में प्रवेश कर गया। उधर राजा की काया खाली देख कर धोबी के मन में दगा सूझा। वह राजा की काया में प्रवेश कर गया और घोड़े पर चढ़ कर राजा रूप उस हरिण को मारने दौड़ा। राजा तुरन्त ही शुक बन कर उड़ गया। राजा बने हुए उस धोबी ने चिड़ीमारों को हुक्म दिया कि शहर में जो भी पक्षी आये, उसे मार डाला जाय। लोग इस रहस्य को समझ नहीं सके। सब यही कहने लगे—'राजा भोज की बुद्धि भ्रष्ट कैसे हो गई ? वह तो कभी ऐसा पापी न था।' किन्तु भानमती जो १५ वीं विद्या जानती थी, वह इस रहस्य को समझ गई। उसने सोनारी को राजा भोज का पता लगाने के लिए भेजा। शुक बने हुए भोज ने सोनारी को सब समाचार कहे। सोनारी शुक को छिपा कर भानमती के पास ले आई। भानमती ने सोलह शृंगार किये। राजा बने हुए उस धोबी ने कहा—'आज तो रानी प्रसन्न दिखलाई पड़ती हैं।' भानमती ने कहा—'पहले भी तो आप बकरा बना करते थे और मैं घुटनों के बल चल कर आया करती थी। आज भी आप बकरा बन कर दिखलाइये।'

धोबी ने राजा की काया छोड़ ज्यों ही बकरे की काया में प्रवेश किया, राजा भोज अपनी 'खोड़' में आ गया। राजा के अपनी काया
[illegible]

ऊपर जो राजस्थानी लोक-कथा दी गई है, उसमें काया-पलट-सम्बन्धी घटनाओं का अच्छा घात प्रतिघात या जमघट देखने को मिलता है, इसलिये यह सक्रिय पद्धति का निदर्शन प्रस्तुत करती है।

जायसी के पद्मावत से जो अंश उद्धृत किया गया है, उसे निष्क्रिय-पद्धति का उदाहरण समझिये।

भारत के अन्य प्रदेशों में भी काया-पलट के अभिप्राय से सम्बन्ध रखने वाली अनेक लोक-कथाएं उपलब्ध है किन्तु राजस्थान में इस प्रकार की लोक-कथाएं प्रचुरता से प्राप्त होती हैं। राजस्थान के जन-जीवन पर नाथ-पंथ का प्रभाव इसका एक कारण हो सकता है।

राजस्थानी लोक-कथाओं में इस मूल अभिप्राय (*Motif*) को १५ वीं विद्या अथवा काया-पलट का नाम दिया गया है।



६. मूल अभिप्राय (नटो तो कहो मत)

खरपुत्त जातक में बतलाया गया है कि राजा सेनक ने एक नागों के राजा से मित्रता करली थी। नागों के राजा ने प्रसन्न होकर सेनक को एक ऐसा मंत्र दिया जिसकी सहायता से वह सभी प्रकार की बोलियों को, यहां तक कि चींटियों की पारस्परिक बातचीत को भी समझने लग गया।

एक दिन जब राजा भोजन कर रहा था तो शहद की बूंद, कुछ गुड़ तथा रोटी का टुकड़ा—ये सब जमीन पर गिर पड़े। एक चींटी यह देखकर चिल्ला उठी—"राजा के शहद का घड़ा फूट गया है, उसके गुड़ की गाड़ी तथा रोटी की गाड़ी उलट गई है; चलो, अच्छा हुआ, खूब शहद, गुड़ और रोटी खाने को मिलेगी।" चींटी की यह बात सुन कर राजा को हंसी आ गई। उसकी रानी ने हंसने का कारण पूछा। राजा के सामने बड़ी कठिन समस्या थी। नागों के राजा ने मंत्र देते समय सेनक को चेतावनी दे दी थी कि अगर वह इस मंत्र का भेद किसी को दे देगा तो उसे तुरन्त अग्नि में प्रवेश कर के प्राण-दण्ड का भागी बनना पड़ेगा। राजा ने बहुतेरा चाहा कि वह भेद की बात किसी को न कहे केन्तु जब उसकी रानी ने बहुत अधिक आग्रह किया तो राजा अपने हंसने का कारण बतलाने ही वाला था कि उसने एक बकरे और बकरी की प्रेम-कहानी सुनी और संभल गया।

ऊपर की कथा में जिस मूल अभिप्राय का प्रयोग हुआ है, उसे [illegible] र एलविन ने [illegible]

इस मूल अभिप्राय का हम संक्षेप में नामकरण करना चाहें तो इसे "नटो तो कहो मत" का नाम दिया जा सकता है। यह मूल अभिप्राय कितना प्राचीन है, यह ऊपर दी हुई जातक-कथा से स्पष्ट है। इस अभिप्राय से संबन्ध रखने वाली अनेक लोक-कथाएँ उपलब्ध हैं। सिंहल की एक लोक-कथा यहाँ दी जा रही है :—

"चींटियों की बातचीत सुन कर एक राजा को हँसी आ गई। उसकी रानी ने हँसी का कारण पूछा। इतने में राजा ने परस्पर झगड़ते हुए बन्दरों की बातचीत सुनी। एक बन्दर की स्त्री भोजन के बारे में बड़ा तूफान मचा रही थी। बंदर ने आव देखा न ताव, अपनी स्त्री की अच्छी पिटाई की। राजा ने यह देख कर मन में विचार किया— "ये बन्दर जैसे प्राणी ही जब अपनी स्त्रियों से नहीं डरते तो मैं ही क्यों डरूँ?" उसने भी अपनी स्त्री को खूब पीटा। उसके बाद रानी ने राजा को कभी परेशान नहीं किया।"

इसी प्रकार इटली की एक कहानी में बताया गया है कि एक बार ईसामसीह किसी धनवान के यहाँ ठहरे और उसे जानवारों की बोली समझ सकने का वरदान दिया किन्तु साथ ही यह चेतावनी भी दे दी कि वह इस भेद को किसी से, यहाँ तक कि अपनी स्त्री से भी, नहीं कहे। इस धनी व्यक्ति ने एक बार एक बैल और गधे की बातचीत सुनी। उसे ात सुनने में इतना आनन्द आया कि वह हँसी से लोट-पोट हो गया। ासकी स्त्री ने जब हँसी का कारण पूछा तो उस धनी व्यक्ति ने बताने इन्कार कर दिया। इस पर स्त्री बहुत रूठ गई। धनी व्यक्ति भी बड़ा खी हुआ और समझ नहीं पा रहा था कि इस समस्या को कैसे हल रे? अंत में उसने डींग मारते हुए एक मुर्गे की बात सुनी। वह कह ा था—'स्त्री को वश में रखना ...

अनेक लोक-कथाएं ऐसी मिलती हैं जिनमे रानी राजा से भेद प्रक करने के लिए हठ करती है। राजा जानता है कि भेद प्रकट कर देने से मेर मृत्यु हो जायगी। इसलिए अपनी स्त्री को इधर-उधर की अनेक कहानिय कह कर अपने को किसी प्रकार बचाने का वह प्रयत्न करता है। किन्तु राजा जब यह देखता है कि भेद कहे बिना कोई चारा नहीं, तब वह रानी को गङ्गा जैसी किसी पवित्र नदी के किनारे ले जाता है। उसके मन मे आता है कि भेद प्रकट करके जब मरना ही है तो किसी पवित्र नदी के तट पर ही भेद प्रकट क्यों न करूं जिससे मरते समय तो मुझे कम से कम कुछ शान्ति मिले। वहाँ भी वह बकरे-बकरी की बात सुनता है। बकरा कहता है कि देखो, एक राजा अपनी स्त्री के कहने से मृत्यु के मुख में प्रवेश करने जा रहा है। मै ऐसा मूर्ख नहीं हूं जो स्त्री के दुराग्रह को मान कर मृत्यु का आलिंगन करूं। इस प्रकार के वार्तालाप को सुन कर राजा का भी विचार बदल जाता है और वह भेद बिना प्रकट किये ही लौट आता है। किसी-किसी कथा में तो इस प्रकार के वार्तालाप का राजा के मन पर इतना प्रभाव पड़ता है कि वह अपनी रानी को घुटनों तक झुकने के लिए कहता है और उसी समय उसका सिर उतार लेता है।

महाकोशल की एक लोक-कथा के अनुसार एक राजा और रानी ठे हुए थे। रानी राजा से हठ कर रही थी कि मुझे भेद बिना बताये ाम नहीं चलेगा। इतने में एक बकरा और बकरी कुएं के पास आये। ुएं में हरी-हरी घास उगी हुई थी। बकरी ने कुएं के अंदर जाने का िचार किया किन्तु उसे डर लगा कि मै कहीं कुएं के अंदर गिर न ाऊँ। उसने बकरे से कहा—'पतिदेव! यदि [illegible]

ने कहा—"तुम तो नर हो, तुम्हें गिरने का क्या डर हो सकता है ? यह सुन कर बकरा बोल उठा—'अब समझा, मैं मर जाऊँ तो तुम्हें कोई डर नहीं क्योंकि तुम किसी दूसरे बकरे से शादी कर लोगी किन्तु मैं ऐसा मूर्ख नहीं जो स्त्री के कहने से अपने प्राणों को जोखम में डालूँ। जीवित रहा तो विवाह करने के लिए मुझे बकरियों की कमी नहीं।' राजा ने यह सुन कर रानी से कहा—'इस बकरे की बुद्धि सराहनीय है; मैं भी इसी का अनुसरण करूँगा। यदि मैं भेद प्रकट कर देता हूँ तो पत्थर के रूप में बदल जाऊँगा किन्तु अब मैं यह करने के लिए कदापि तैयार नहीं। तुम्हारी इच्छा हो, विष खालो, तुम्हारी इच्छा हो, कटारी खाकर मर जाओ, तुम्हारी इच्छा हो, कुएँ में डूब कर प्राण त्याग कर दो। यदि मैं जीवित रहा तो तुम्हारी जैसी अनेक स्त्रियाँ मुझे मिलेंगी।' यह कह कर वह घर के लिए लौट पड़ा और उसकी स्त्री भी बिना ननुनच किये उसके पीछे होली।"

उक्त कथा को पढ़कर राजस्थान की प्रसिद्ध लोक-कथा 'चौबोली' का स्मरण हो आता है जिसका निम्नलिखित अंश यहाँ उद्धृत किया जा रहा है—

"उजेणी नगरी राजा भोज राज करै। तिण राजा रै च्यारि मित्र। ... राजा भोज रै घरे आया। घणा कायदा किया। अनेक भाँति री ...क्ति हुई। घणां सनमान दे नैं कह्यौ—पनरहवीं विद्या मोनुं जिण ...ति आवै तिम करो। ताहरां च्यारां ही कह्यौ—जु वाराही देवी रै ...इ नैं पूजा आह्वांन करि देवी आराहिस्यां। पिण हेक थोक महाराज ...रणौ छै। पंण राणीजी अर थां गाढो सुख छै। कोई बात पूछै तो ...ै मतां। अर नटो तो कहो मत्तां ...

राजा कह्यो—म्हे क्यां ही नुं कहिस्यां। एक दिन राजा आरोगतो और रांणीजी माख्यां उड़ावता हुता। गछ गरी रौ आंगणौ थौ, रै एक कीड़ो चावल ले हाली हुती तितरै बीजी आइ खोसण नूं । ताहरां कीड़ो बोली—मो आगा कासूं खोसै। अै चावल राजा री थाली माहे घणा ही पडिया छै। तूं और ले जाह। ताहरां ी कह्यो—म्हारे पाहुणा आया छै, ले जांवण दे मोनुं। इसी बात लि नै राजा भोज हसीयौ। राजा जीव भाषा सब जाणतौ। रां राणी पूछियौ—जु महाराज, कुण वासतै हंसीया। राजा नटीयौ। ी बहुत गाढ करि पूछण लागा। जु महाराज, मोनुं हंसीया रौ तंत कहीजै। राजा मन मैं विचारीयो—नटीयौ तो कहण रौ मै । कहीजै तो मरण हुवै। रांणी दांतण फाड़ै नहीं। ताहरां राजा ी—बात गंगाजी रै तट कहीजसी। राजा चालीयो। गंगाजी रै सिहकर सहर हुतौ। बाहिर जाइ उतरीया उवां हूरौ कोस पांचे नदी रै कांठै जंगल माहे डेरा हूया। नदी री हवा देख अर जंगल रीयौ। एकांत पधारीया। आगै कूवौ छै। कूवै माहे काचरा री बेल त फली छै। कूवै कांठै एवड़ चरै छै। एक छाली बाकरै नुं कहै छै— मांहि काचर ले दै तो तौनुं वरूं। ताहरां बाकरो बोलीयौ—म्हारो ल राजा भोज मिली नही छै। बाइर रै कहीयै मरण नुं जाइ छै। र साबत तो ब्याह घणां। तिका बात सांभलि नै राजा विचारीयौ हूँ चौदह विद्या रौ निधान सुं म्हारी मति बाकरै कही। राजा पाछौ आयो। रांणी आय हजूर बैठी छै। राणी कहै—रावलै गंगारै त कांइ करणी छै नहीं, रावलै विमाह करणौ छै। वीमाह करौ तो बोली परणीजिस्यौ।"

अर्थात् उज्जैन नगरी मे राजा भोज राज्य करता था। उसके चा

कहा कि पन्द्रहवीं विद्या मुझे जिस भाँति आवे, वैसा करो। इस पर चारों ने ही कहा कि वराही देवी के यहाँ जाकर पूजा-आवाहन करके हम देवी की आराधना करेंगे। परन्तु महाराज ! एक बात तुमको करनी है। चूंकि रानीजी और तुम मे घनिष्ठ प्रेम है, इसलिए यदि वह कोई बात पूछे तो इन्कार मत करना। और यदि इन्कार करदो तो कहना मत। और यदि बात को इन्कार करके कह दोगे तो तुम्हारा मरण होगा।

राजा ने कहा कि हम क्यों कहेंगे। एक दिन राजा भोजन कर रहा था और रानीजी मक्खियाँ उड़ा रही थीं। पक्का आँगन था। वहाँ एक चींटी चावल लेकर चली। उसी समय दूसरी चींटी आकर छीनने के लिए लिपट गई। तब चींटी ने कहा—'मेरे आगे से क्यों छीनती है ? ये चावल राजा भोज की थाली मे बहुत पड़े हैं। तू और ले जा।

इस पर चींटी ने कहा—हमारे मेहमान आये है, मुझे ले जाने दे। ऐसी बात सुन कर राजा भोज हँसा। राजा सब जीवो की भाषा जानता था। तब रानी ने पूछा कि महाराज, आप किस कारण हँसे ? राजा ने इन्कार किया। रानी बहुत आग्रह करके पूछने लगी कि महाराज, मुझे हँसने का वृत्तान्त कहो। राजा ने मन में विचार किया—इन्कार कर गया तो अब मैं कहने का नहीं। यदि कह दिया तो मरण होगा। रानी हाथुन नहीं करती। तब राजा ने कहा कि गंगाजी के तट पर बात कहूँगा। राजा चला।

गंगाजी के समीप सिंहकर शहर था। उसके बाहर आकर राजा उतरा। वहाँ से पाँच कोस की दूरी पर एक नदी के समीप जंगल में डेरा डाला गया। नदी की शोभा देख कर राजा जंगल में गया जहाँ

लाड़े सो मैं तुझसे शादी करूँ।" इस पर बकरे ने कहा—'मेरी बुद्धि राजा भोज जैसी नहीं है जो स्त्री के कहने पर मरने जा रहा है। 'सिर सावस तो ब्याह घने।' यह बात सुन कर राजा ने विचार किया कि मैं चौदह विद्या निधान और मेरी बुद्धि का भेद एक बकरे ने प्रकट कर दिया। राजा लौटकर डेरे में आया। रानी आकर सामने बैठी। रानी ने कहा कि आपको गंगा की तीर्थ-यात्रा तो कुछ करनी है न् ीं—आप तो दूसरा विवाह करेंगे। विवाह करें तो चौबोली से करिये।"

चौबोली के इस कथांश मे और पहले उद्धृत की हुई लोक-कथाओं में अद्भुत साम्य है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय हैं:—

१. राजा भोज के चारों मित्र उसे जीव-जन्तुओं की भाषा अर्थात् १५ वीं विद्या सिखलाते हैं किन्तु इस भेद के प्रकट कर देने के दुष्परिणाम के प्रति उसे सतर्क कर देते हैं।

२. रानी हंसने का कारण पूछती है और राजा भोज बताने से इन्कार कर देता है।

३. जब रानी हठ ठान लेती है और दातुन नहीं करती तब राजा गंगाजी के तट पर जाकर भेद प्रकट करने की बात कहता है।

४. बकरे और बकरी की बात सुनकर राजा भोज के मन में प्रायः वैसी ही प्रतिक्रिया होती है जैसी ऊपर उद्धृत अन्य लोक-कथाओं के नायकों के मन में होती है।

५. अन्य लोक-कथाओं की भांति हंसी का कारण चींटियों का परस्पर वार्तालाप है।

किन्तु राजस्थानी कथाकार ने एक बात कही है जो [illegible]

में [illegible]

ना करना पड़ेगा। 'या तो इन्कार मत करना' यह शर्त राजस्थान
-कथा के अतिरिक्त अन्य किसी लोक-कथा में नहीं है। अन्य बा
रण की दृष्टि से कुछ भिन्न भले हों किन्तु मूलतः एक है।

हाँ, राजस्थानी कथा की परिणति कुछ भिन्न मालूम पड़ती है
ा को एक ऐसा अवसर मिल गया है जिसके कारण वह भेद प्रक
देने के संकट से बच गया है। जब रानी यह कहने लगती है
की गंगाजी की जात तो कुछ देनी है नहीं, आपको तो चौबोली
ाह करना है तो कथा का प्रवाह दूसरी ओर प्रवाहित होने लग
इसका कारण सम्भवतः यह है कि यह चौबोली का कथांश मा
सम्पूर्ण कथा नहीं। चौबोली की मुख्य कथा की अवतारणा के लि
म्भवतः लोक-कथाकार को इस प्रकार की परिणति का आश्रय ले
है। यदि उक्त कथा-खण्ड स्वतन्त्र कथा के रूप में लिखा जाता
निश्चित है कि इस स्वतन्त्र कथा की परिणति भी अन्य लोक-कथा
भांति ही होती। बकरे और बकरी की बात सुनकर राजा भी
प्रकट करके कभी भी अपने प्राणों को जोखम में न डालता।

'नटो तो कहो मत' इसे एक स्वतन्त्र मूल अभिप्राय के रूप
ण किया गया है। पिछले पृष्ठों में उपश्रवण (*Overhearing*
क एक मूल अभिप्राय की चर्चा की गई है। उससे इस अभिप्र
समानता होते हुए भी दोनों अभिप्राय परस्पर भिन्न हैं। उपश्रव
क मूल अभिप्राय में अनागत विपत्तियों की चेतावनी देना ज
ाकार का मुख्य लक्ष्य है, वहाँ इस अभिप्राय में जीव-जन्तुओं
ली समझने पर विशेष बल दिया जाता है। हाँ, दोनों ही अभिप्रा
यह बात अवश्य समान है कि भेद प्रकट कर देने पर खतरे का साम